काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 'महामना मालवीय एवं डॉ॰ अम्बेडकर के वैचारिक दर्शन' विषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी में महामहिम राज्यपाल श्री राम नाथ कोविन्द का संबोधन

(दिनांक–16.11.2016, समय–12.00 बजे, स्थान–वाराणसी)

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सामाजिक विज्ञान संकाय, मालवीय मिशन एवं मालवीय भवन के संयुक्त तत्वावधान में ''महामना मालवीय एवं डॉ॰ अम्बेडकर के वैचारिक दर्शन'' विषयक इस राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन में प्रमुख रूप से उपस्थित सामाजिक विज्ञान संकाय के प्रमुख प्रो॰ मंजीत चतुर्वेदी जी, 'मालवीय मिशन' के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष डॉ॰ डी॰पी॰ सिंह जी, मिशन के अध्यक्ष प्रो॰ उपेन्द्र पाण्डेय जी, महामंत्री श्री विजय नाथ पांडेयजी, संगोष्ठी में उपस्थित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सभी विद्वान शिक्षकगण, विद्यार्थीगण, मीडिया–प्रतिनिधिगण, देवियों एवं सज्जनों!!

धर्मकला, ज्ञान, संस्कृति एवं साहित्य, या विद्याओं, यों कहें कि विद्याओं की प्रतिनिधि–नगरी काशी की पावन–भूमि पर इस विद्वत्–सभा को संबोधित करना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। आपने आज की राष्ट्रीय संगोष्ठी का जो विषय चयनित किया है–'महामना मालवीय और डॉ॰ अम्बेडकर के वैचारिक दर्शन'–यह अत्यन्त व्यापक और समीचीन विषय है। इस विषय को अत्यन्त व्यापक, बहुआयामी फलक पर देखना–समझना होगा। मेरे पूर्व वक्ताओं ने काफी गहराई और तथ्यपरक रूप में दोनों महापुरूषों के वैचारिक विमर्श के महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत किया है। मैं कुछ अपनी ओर से जोड़ने का प्रयास करूँगा।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना मालवीय जी एक युगद्रष्टा और राष्ट्रनिर्माता के रुप में हम सबके हृदय में

विराजमान हैं। उनके जीवन–वृत्त पर प्रकाश डालने से सहज और अनायास ही 'भारतीयता' का यथार्थ बोध होने लगता है। सनातन धर्म और देशज संस्कृति के पुरोधा महामना भारतीय राष्ट्रीयता के शैशवकाल से आद्योपान्त ब्रिटिश उपनिवेशवाद के समाप्ति तक राष्ट्र के नवनिर्माण में जीवन–पर्यन्त समर्पित रहे। मानवता की सेवा में प्रतिबद्ध उनका जीवन देश एवं समाज के सर्वांगीण विकास से प्रेरित था। शिक्षा एवं संस्कृति की बुनियाद पर खड़ा भारतीयता का कलेवर उनकी जेहन में समाया हुआ था। वह सांस्कृतिक विघटन एवं सामाजिक संघर्ष को सिरे से नकारते थे। जहाँ गाँधी जी अम्बेडकर साहब के अस्पृश्यता–निवारण को भरपूर समर्थन देते थे, वहीं महामना भी दलितों के उत्थान हेतु प्रतिबद्ध थे। सम्पूर्ण राष्ट्र को एक समवेत स्वर से एकजुट करने में महामना का योगदान किसी से कम नहीं था। विविधतामूलक समाज में एकता को राष्ट्रजीवन की विशेषता मानने वाले मालवीय जी को पग–पग पर देश, समाज तथा राष्ट्र के नवनिर्माण की चिंता थी। जब ब्रिटिश शासन की फूट डालने की नीति का कुपरिणाम 'मैक्डानेल्ड एवार्ड' के रुप में देश के समक्ष आया, तो महामना तिलमिला उठे। 'पूना पैक्ट' में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। मालवीय जी ने इसमें गाँधी जी की जान, डॉ॰ अम्बेडकर के मिशन तथा हिन्दू समाज की एकता–तीनों के लिए रक्षा–कवच की तरह काम किया। गाँधी, मालवीय एवं अम्बेडकर– तीनों के महान प्रयास ने सारे देश को यह स्वीकार कराया कि अस्पृश्यता की समस्या सारे देश और सारे भारतीयजन की समस्या है जिससे निजात पाने हेतु एकजुट होकर संघर्ष करना अपरिहार्य है। विकास की धारा में हिन्दू समाज के तथाकथित दलितों को समानता का अवसर देना आवश्यक है। सारी दुनियाँ यह जानती है कि 24 सितम्बर 1932 को सम्पन्न 'यरवदा समझौता' (पूना पैक्ट) इसी सोच का परिणाम है, जिस पर दलित वर्ग की ओर से डॉ॰ अम्बेडकर साहब एवं सवर्णों की ओर से

मालवीय जी ने हस्ताक्षर किए। अन्य हस्ताक्षर करने वालों में सर्वश्री जयकर, तेज बहादुर सप्रू, धनश्याम दास विड़ला, राजगोपालचारी, डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद आदि थे। इतना ही नहीं, अगले ही दिन 25 सितम्बर, 1932 को बम्बई में एक बड़ी आम सभा हुई, जिसकी अध्यक्षता महामना मालवीय ने की। अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में महामना ने कहा कि ''अब किसी को भी जन्म से अछूत नहीं समझा जाना चाहिए और देश में छूआछूत का अन्त होना चाहिए।'' इन बातों का ऐसा प्रभाव पड़ा कि जगह–जगह मंदिरों के कपाट अछूतों के लिए खुलने लगे तथा स्वयं मालवीय जी जैसे प्रकाण्ड विद्वान ने गंगा के किनारे समाज के अभिवंचितों को गुरू–मन्त्र दिया। इससे सारे देश में सद्‌भाव का वातावरण बना। इतना ही नहीं, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के भोजनालय में कर्मचारियों द्वारा अस्पृश्य विद्यार्थियों के बर्तन साफ करने से मना करने पर मालवीय जी स्वर्गीय जगजीवन राम जैसे अनुसूचित वर्ग के विद्यार्थियों के जूठे बर्तन साफ करने को स्वयं तत्पर हो गए। 'पूना समझौते' के निर्णय ने राष्ट्र के भावी कलेवर को भी काफी गहरे तक प्रभावित किया। मालवीय जी भारतवर्ष को सभी समुदायों का देश मानते थे और उनका विचार था कि ''भारतवर्ष केवल हिन्दुओं ही का देश नहीं वरन्, यह तो मुसलमानों, ईसाइयों एवं पारसियों का भी देश है। यह देश तभी समुन्नत और शक्तिशााली हो सकता है, जब भारतवर्ष की विभिन्न जातियाँ और यहाँ के विभिन्न सम्प्रदाय पारस्परिक सद्‌भाव एवं एकात्मकता के साथ रहें और स्वशासित राष्ट्र का निर्माण करें।''

यदि हम डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर के जीवन एवं कृतित्व का विश्लेषण करें, तो कहेंगे कि उनका जीवन भी सामाजिक न्याय की स्थापना के संघर्ष का सम्पूर्णतः मुखरित अभिलेख और प्रतिमान है। डॉ॰ अम्बेडकर का आविर्भाव ज्योतिबा फूले के जन्म के 65 साल बाद

हुआ। दोनों में जन्म का लम्बा अन्तराल होने के बावजूद, दोनों के वैचारिक चिंतन की समानता एवं सदृश्यता बहुत समीचीन थी। महात्मा फूले की तरह ही उनका भी लक्ष्य, चिंतन एवं जुझारुपन विलक्षण था। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि अम्बेडकर का अधिकांश चिंतन, हिन्दू धर्म में व्याप्त विकृतियों पर आधारित था। अगर भारत में डॉ॰ अम्बेडकर का चिंतन एवं दर्शन पूरी तरह पुष्पित एवं पल्लवित होता, तो एक समग्र सामाजिक क्रान्ति का अभ्युदय हुआ होता। डॉ॰ अम्बेडकर का सारा दर्शन, सामाजिक सुधार, राजनीतिक चेतना और आध्यात्मिक जागरण के स्तंभ–त्रयी पर खड़ा है।

वस्तुतः अस्पृश्यता, गैर–बराबरी, भेदभाव– जनित व्यवहार–सभी के मूल में विषमतामूलक समाज है। इस संक्रामक व्याधि की रामबाण औषधि सामाजिक समानता ही है। सच कहा जाय तो सामाजिक न्याय, राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रनिर्माण की आधारशिला है। डॉ॰ अम्बेडकर का कहना था कि राष्ट्र, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता से बनता है। विभिन्न जातियों में बँटे समाज को एक राष्ट्र की संज्ञा कैसे दी जा सकती है। फलतः सामाजिक–सांस्कृतिक एकता का ताना–बाना छिन्न–भिन्न होने लगता है। उनकी पुस्तक ष|ददपीपसंजपवद वि्ंजमष (एनीहिलेशन ऑफ कास्ट) में उनके यही विचार परिलक्षित होते हैं। डॉ॰ अम्बेडकर के जीवन–दर्शन को विश्लेषित करने पर एक बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि हमें उनको मात्र दलित–हित–चिंतक न मानकर, उन्हें सर्वसमावेशी समाज का पक्षधर स्वीकार करना चाहिए। हमारा यही चिन्तन आधुनिक भारतवर्ष के सशक्त निर्माण की आधारशिला भी तैयार करेगा।

वास्तव में डॉ॰ अम्बेडकर का अस्पृश्यता– विरोधी आन्दोलन एक विचार मात्र नहीं, वरन् एक ऐसा सुचिंतित माध्यम भी था, जिसे आधार बनाकर वे स्वतंत्रता, समता एवं बन्धुता की नींव पर समग्र हिन्दू

समाज की पुनर्रचना करना चाहते थे। यही उनके सामाजिक न्याय की अवधारणा का निहितार्थ भी है। स्वतंत्रता से उनके मायने थे कि जन्म से प्रत्येक व्यक्ति समान है और उसे समान अवसर मिलना चाहिए। धर्मसत्ता, समाजसत्ता एवं राजसत्ता को व्यक्ति की प्रगति में किसी रुप में बाधक नहीं होना चाहिए। वे भारत की केवल कुछ प्रतिशत आबादी के लिए ही नहीं, वरन सभी भारतीयों के लिए समानता चाहते थे। उनकी बन्धुत्व की कल्पना भी सम्पूर्ण समाज के प्रति भाईचारा के भाव से ओत–प्रोत थी।

महामना मालवीय जी की भाँति ही डॉ॰ अम्बेडकर भी महिलाओं के उत्थान के प्रबल पक्षधर थे। वे महिलाओं को समाज में बराबरी का दर्जा देते थे और मानते थे कि सामाजिक समरसता से ही आर्थिक समानता आएगी और तभी व्यक्ति के गरिमा की रक्षा सम्भव है। इसी आधार पर उन्होंने नारी–स्वतंत्रता एवं उनके अन्य अधिकारों तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की भरपूर वकालत की। उन्होंने न केवल महिलाओं को शिक्षित बनाने तथा सम्मान से जीवन जीने का हक देने के पक्ष में अपनी राय दी, बल्कि 'हिन्दू कोड बिल' के माध्यम से उन्होंने हिन्दू महिला को नव जीवन प्रदान करने की भी पूरी वकालत की।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि दोनो राष्ट्रनिर्माताओं ने एक समानतामूलक समाज को राष्ट्रनिर्माण का प्रमुख कारक माना है। इसके बिना मालवीय जी एक सशक्त भारतवर्ष की कल्पना नहीं करते थे और डॉ॰ अम्बेडकर भी समता के बिना भारतीय लोकतंत्र को समृद्ध, सशक्त एवं खुशहाल नहीं देखते थे। यदि हम इनके सुझाए मार्गो पर चलते हैं तो स्वयं अपना एवं राष्ट्र का भविष्य बना सकेंगे।

महामना मालवीय जी एवं डॉ॰ अम्बेडकर जी की वैचारिक समानताओं के परिप्रेक्ष्य ऐसी सारगर्भित संगोष्ठी के आयोजन के लिए, मैं समस्त काशी हिन्दू विश्वविद्यालय–परिवार एवं आयोजक–संस्थाओं को हृदय से धन्यवाद देता हूँ। अभी चार दिन पहले ही महामना मालवीय जी की पुण्य–तिथि गुजरी है। आप सबने उनका पुण्य स्मरण किया होगा। मैं भी महामना मालवीय जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। डॉ॰ अम्बेडकर जी की स्मृति को भी मैं नमन करता हूँ। आप सबको बहुत–बहुत धन्यवाद!

जय हिन्द!!

प्रस्तुति–जन–सम्पर्क शाखा, राजभवन, पटना।